



भारतीय ज्ञान परंपरा में प्रकृति संरक्षण

डा.सुशील प्रसाद

सहायक आचार्य साहित्य विद्याशाखा

केन्द्रीय संस्कृत विश्वविद्यालय

श्रीरघुनाथ कीर्ति परिसर देवप्रयाग पौड़ी

शोधसार- ' आ समन्तात् वृणोति-आच्छाद्य रक्षति इति पर्यावरणम् ' अर्थात् जो हमें चारों ओर से आच्छादित करें वह पर्यावरण कहलाता है। अंग्रेजी में पर्यावरण के लिए Environment शब्द प्रयुक्त होता है इसका भी सामान्य भाव है चारों ओर से आवृत करना या घेरना । भारतीय परंपरा में सृष्टि के निर्माण में पंचभूतों का योगदान माना गया है यजुर्वेद में पंचतत्त्वों का सर्वप्रथम वर्णन प्राप्त होता है, श्वेताश्वर उपनिषद् में कहा गया है कि पांच महाभूतों के संतुलन से जरा ,मृत्यु एवं रोग आदि से मुक्ति प्राप्त होती है-

पृथ्व्यप्तेजोनिखिले समुत्थिते पंचात्मके योगगुणप्रवृत्ते ।

न तस्य रोगो न जरा न मृत्युःप्राप्तस्य योगाग्निमयं शरीरम् ॥¹

पृथ्वी पर जीव के लिए पंच महाभूतों का संतुलन नितांत आवश्यक है इनके संतुलन से ही पृथ्वी पर जीवधारी सुखपूर्वक निवास कर सकते हैं इनकी विसंगति प्राणि मात्र के लिए दुःख का कारण बन सकती है इसी कारण भारतीय परंपरा में पृथ्वी, तेज ,जल ,वायु एवं आकाश इन सभी को पूज्य माना गया है एवं इनकी समृद्धि को ही सुख का कारण बताया गया है -

एवं वायुमग्निं सलिलं महीच ज्योतिर्षीणि सत्त्वानि दिशो द्रुमानि ।

सरित्समुद्रांश्च हरे शरीरं यत्किंच भूतं प्रणमेदन्यः ॥²

अर्थात् आकाश, वायु, अग्नि ,जल, पृथ्वी, ग्रह ,नक्षत्र, प्राणी, दिशायें ,वनस्पति ,नदियां, समुद्र सर्व व्यापक हरि के ही शरीर है इन स्वरूपों में भगवान स्वयं प्रकट होते हैं अतः इन सबको नमस्कार है । इस प्रकार जड़ चेतन संपूर्ण भौतिक एवं दृश्य-अदृश्य चराचर जगत् को ईश्वरीय अंश मानकर उसकी आराधना करने की परंपरा के कारण पंच महाभूत इत्यादि के संरक्षण एवं संवर्धन से हमारा पर्यावरण सभी के लिए सुखद एवं दीर्घायु प्रदान करने वाला स्वतः ही बन जाता है जो जीव मात्र के लिए मंगलप्रदान करने वाला है । पर्यावरण का मूल संबंध मानव की दैनिक गतिविधियों से लिया जाता है, प्रकृति एवं जीव का घनिष्ठ संबंध है प्राचीन अवधारणा है कि '

¹ श्रीमद् भागवत पुराण 11/02/41

² श्वेताश्वरोपनिषद् 02/12

यत् पिंडे तत् ब्रह्मांडे ' पिंड और ब्रह्मांड दोनों का ही निर्माण पांच महाभूतों से होता है पिंड का अर्थ पांच भौतिक शरीर एवं ब्रह्मांड का तात्पर्य पांच भौतिक जगत् से है।

कूट शब्द - आवृत्त, समन्तात्, मंत्रदृष्टा, होत्री, अनावलम्बनता, प्रतिघातशून्यता, भूतता, विकृति।

विषयविस्तार-

भारतीय ज्ञान परंपरा में पर्यावरण के लिए प्रकृति शब्द प्रयुक्त किया गया है, प्रकृति चेतना के रूप में पर्यावरण चेतना, देह में आत्मा के समान है। वैदिक संस्कृत साहित्य में सर्वव्यापक मंत्रदृष्टा ऋषियों ने प्रकृति के भीतर चैतन्यता का अनुभव किया। संस्कृत साहित्य में इस संदर्भ में विस्तार पूर्वक चिंतन एवं मनन किया गया है। विभिन्न भारतीय दार्शनिक मत अपनी अपनी दृष्टि से पंचमहाभूतों के अस्तित्व को स्वीकार करते हैं, श्रीमद्भगवत् गीता में यह स्पष्ट किया गया है कि पंच महाभूतात्मक सृष्टि और मानव के सह अस्तित्व में ही जीव मात्र का हित है-

सह यज्ञाः प्रजाः सृष्ट्वा पुरोवाचः प्रजापतिः।

अनेन प्रसविष्यध्वमेष वोस्त्वष्टकामधुक् ।।

देवान्भावयतानेन ये देवा भावयन्तु वः ।

परस्परं भावयन्तः श्रेयः परमवाप्स्यथ॥³

अर्थात् प्रजापति ब्राह्मा ने सृष्टि के आदि में यज्ञ सहित प्रजा का निर्माण कर उनसे कहा कि तुम लोग इस यज्ञ के द्वारा (सृष्टि संवर्धन के द्वारा) वृद्धि को प्राप्त होवो और यह यज्ञ तुम लोगों को इच्छित भोग प्रदान करने वाला हो, तुम लोग इस यज्ञ के द्वारा देवताओं को पुष्ट करो और वे देवता (पंचमहाभूत) तुम लोगों को उन्नत करें, इस प्रकार निःस्वार्थ भाव से एक दूसरे को उन्नत करते हुए तुम लोग परम कल्याण को प्राप्त हो जाओगे। संस्कृत साहित्य के महान कवि कालिदास ने विश्व प्रसिद्ध अभिज्ञान शाकुंतलम् नामक नाटक में मंगलाचरण द्वारा प्रकृति का वन्दन इस प्रकार किया है -

या सृष्टिः सृष्टुराद्या वहतिविधिहुतं या हविर्या च होत्री ,

ये द्वे कालं विधत्तः श्रुतिविषयगुणा या स्थिता व्यास विश्वम् ।

यामाहुः सर्वबीजप्रकृतिरिति यया प्राणिनः प्राणवन्तः,

प्रत्यक्षाभिः प्रपन्नस्तनुभिरवतु वस्ताभिरष्टाभिरीशः ॥⁴

अर्थात् जो परमात्मा की प्रथम सृष्टि जल रूप है। जो विभिन्न प्रकार से हवन की गई हवि को ग्रहण करती है अर्थात् अग्निमयी मूर्ति तथा जो हवन कर्त्री (यजमान रूप मूर्ति) है तथा जो दो मूर्तियां समय का विभाजन करती हैं अर्थात् सूर्य एवं चंद्रमा तथा श्रवण इंद्रिय की विषय स्वरूप शब्द गुण वाली (आकाश मयी मूर्ति) जो समस्त संसार को व्याप्त करके स्थित है अर्थात् पृथ्वी रूप में जिसे समस्त बीजों का कारण कहते हैं तथा जिससे सभी प्राणी जीवित रहते हैं वह वायु रूपी मूर्ति, इन प्रत्यक्ष आठ मूर्तियों से युक्त परमात्मा हमारी रक्षा करें। इस

³ श्रीमद् भगवत् गीता 03/10-11

⁴ अभिज्ञान शाकुंतलम्- 1/1

मंगलाचरण के द्वारा कवि ने पर्यावरण के सभी तत्वों को स्पर्श करने की चेष्टा की है, यदि ये सभी तत्व हमारे अनुकूल होते हैं अर्थात् इनको हम देव स्वरूप मानकर इनका अतिक्रमण नहीं करते तो ये सभी हमारे अनुकूल होकर जीवमात्र के लिए कल्याणकारी साबित होंगे। क्योंकि पृथ्वी, तेज, जल, अग्नि, वायु, आकाश इत्यादि ये सभी तत्व यदि प्रभावित होते हैं तो यह जीव के लिए चिंताजन होता है, जैसे हम वर्तमान में भी दृश्य देख रहे हैं प्रकृति में असन्तुलन के कारण कहीं बाढ़ कहीं सूखा आदि प्राकृतिक प्रकोप से सम्पूर्ण विश्व त्रस्त होता रहता है। भारतीय ज्ञान परंपरा का मूल वैदिक साहित्य है, वैदिक साहित्य में अनेक स्थलों पर प्रकृति के महत्व को प्रदर्शित किया गया है धार्मिक दृष्टि से भी इसे पूजनीय माना गया है ऋग्वेद कालीन ऋषि जल के औषधीय गुणों से विज्ञ थे, ऋग्वेद में जल को जीवन का आधार बताया गया है। महाभारत में भी प्रकृति के प्रति आदर भाव व्यक्त किया गया है मानव को प्राणियों के साथ सौहार्दपूर्ण व्यवहार करना चाहिए। मनु के अनुसार ईश्वर की विशिष्ट रचना मनुष्य है जिसके संयमित जीवन से प्रकृति का व्यवस्थित संचालन होता है। वैदिक काल से लेकर सम्पूर्ण भारतीय वांगमय में प्रकृति को विशिष्ट स्थान दिया गया है पर्यावरण का संरक्षण इसकी शुद्धता इसकी सुचिता पर विशेष ध्यान दिया गया है। प्रकृति के साथ सामंजस्य होना नितांत आवश्यक है वेदों में पृथ्वी को केवल उपभोग का स्रोत नहीं माना है, बल्कि यह हमारी माता है जिस प्रकार माता शिशु का संरक्षण करती है उसी प्रकार प्रकृति भी हमारा रक्षण एवं पोषण करती है। अथर्ववेद का यह मंत्र कहता है कि जो शांति कर्मों को करते हैं वे शांति कर्म जीवन की रक्षापरिधि बन जाते हैं तथा सभी जीव सुखपूर्वक जीवित रहते हैं- सर्वो वै तंत्र जीवति गौरस्वः पुरुषः पशुः। यत्रेदं ब्रह्म क्रियते परिधिर्जीवनायकम्॥ भगवत् गीता में स्पष्ट किया गया है कि पंच भूतात्मक सृष्टि और मानव की विवेकपूर्ण स्थिति से ही श्रेय का मार्ग निकलता है -

इष्टान्भोगान्हि वो देवा दास्यन्ते यज्ञभाविताः।

तैर्देतान्प्रदायैभ्यो यो भुङ्क्ते स्तेन एव सः॥⁵

मानव का प्रकृति से सौहार्दपूर्ण संबंध होना चाहिए, दोनों एक दूसरे के पूरक हैं इस बात को ईशावास्य उपनिषद् के मंत्र से समझा जा सकता है-

ईशावास्यमिदं सर्वं यत्किंच जगत्यां जगत्।

तेन त्यक्तेन भुंजीथा मा गृधः कस्यस्विद्धनम्॥⁶

अर्थात् जगत् के बहार एवं जगत् के भीतर ईश्वर या देवता का वास है सांसारिक वस्तुओं के त्याग मूलक भोग में ही जगत् की सत्ता संरक्षित रह सकती है। सुकृत्यों की वृद्धि से जीवन संभव है। किसी कर्म में हमारी आदत होने पर उसकी समाप्ति होने से यह कष्ट का विषय बन सकता है। श्रीमद् भागवत् महापुराण में पांच तत्वों एवं इस चराचर जगत् को ईश्वर का स्वरूप मानकर प्रणाम किया गया है-

खं वायुमग्निं सलिलं महीं च ज्योतींषि सत्त्वानि दिशो दुमादीन।

सरित समुद्रांश्च हरे शरीरं यत्किंच भूतं प्रणमेदनन्यः॥⁷

⁵ श्रीमद्भगवत् गीता 03/10

⁶ ईशावास्योपनिषद् 01/01

⁷ श्रीमद्भागवत पुराण-04/02/41

श्रीमद् भागवत महापुराण के एक प्रसंग में पृथ्वी मानवों का उपहास करती हुई कहती है कि जो तुम इस पृथ्वी को जीतने की बात करते हो तुम स्वयं ही मृत्यु के खिलौने हो ऐसी मृत्यु के खिलौने दूसरे को क्या जीत पाएंगे-
दृष्ट्वात्मनि जमये व्यग्रान् नृपान् हसति भूरियम् ।

अहो मां विजिगीसन्ति मृत्योःक्रीडनका नृपाः ॥⁸

भारतीय दार्शनिक परंपरा में सृष्टि के निर्माण में सर्वाधिक महत्वपूर्ण पंचतत्त्व ही माने गये हैं सभी दार्शनिक संप्रदाय भी किसी न किसी रूप में इस तथ्य को स्वीकार करते हैं । मनुष्य से लेकर सभी प्राणियों का निर्माण पंचतत्त्व से ही हुआ है आकाश ,जल ,वायु ,अग्नि और पृथ्वी की उत्पत्ति होने से पान्चभौतिक निर्माण होता है । वैदिक वाङ्मय में सर्वप्रथम यजुर्वेद की तैत्तरीय संहिता में पंचतत्त्वों का वर्णन मिलता है-

पंचभिर्धाता वि दधाविदं यत् तासां स्वसृजनत् पंच पंच।

तासामु यन्ति प्रयवेण पंच नाना रूपाणि क्रतवो वसाना ॥⁹

पंचमहाभूत ही सृष्टि के मूल कारक हैं और इन्हीं को पर्यावरण कहा जाता है क्योंकि इन्हीं के द्वारा हम सब जीव विद्यमान हैं, पंचमहाभूतों के विनाश का नाम ही प्रलय है इस संबंध में महाभारत में कहा गया है कि -

महाभूत बिनाशान्ते प्रलये प्रत्युपस्थिते ।

सर्वप्राणभृतां धीरा महदुत्पद्यते भयम् ॥¹⁰

अर्थात् पंचभूतों के विनाश से ही प्रलय उपस्थित हो जाता है ।पंच महाभूतों के संरक्षण की व्यवस्था वैदिक साहित्य में प्रचुर मात्रा में कही गई है अथर्ववेद के पृथ्वी सूक्त में पृथ्वी को मातृवत् माना गया है -
माताभूमिःपुत्रोऽहं पृथिव्याः । वेदों में जल की शुद्धि के लिए भी अनेक प्रार्थनाएं की गई हैं जल सबके लिए कल्याणकारी हो, वह रोग से मुक्ति देने वाला हो-

शं तो आपो हैमवतीःशमु ते सन्तूत्स्याः ।

शं ते सनिष्यन्दा आपः शमु ते सन्तु वर्ष्वाः ।¹¹

शं नो मित्र शं बरुणः शं नो भवत्वर्थमा ।

शं नो इन्द्रो बृहस्पतिः शं नो विष्णु रुरुक्रमः ॥¹²

उपनिषद् साहित्य में जल को मूल तत्व माना गया है जल के बिना जीवन असंभव है। इसी प्रकार आकाश तत्व के संदर्भ में महाभारत में कहा गया है कि आकाश के दस धर्म हैं - शब्द, व्यापकता, छिद्रता , अनाश्रयता ,अनावलंबनता , अव्यक्तता, अविकारिता ,प्रतिघातशून्यता ,भूतता और विकृति । ध्वनि प्रदूषण से तात्पर्य आकाश तत्व में विकृति से है उसके कारण अनेक प्रकार से जीवों को कष्ट हो सकते हैं। इसी क्रम में वायु तत्व आता है महर्षि चरक ने वायु को सर्व सामर्थ्यशाली तथा आयु कहा है-

⁸ श्रीमद्भागवत पुराण- 12/03/01

⁹ यजुर्वेद तैत्तरीय संहिता, 04/03/11

¹⁰ महाभारत.आश्वमेधिक पर्व. 42/3

¹¹ अथर्ववेद 19/2/1

¹² ऋक्. 1/90/9

वायुरायुर्बलं वायुर्वायुर्धाता शरणिणाम् ।

वायुर्विश्वमिदं सर्वं प्रभुर्वायुश्च कीर्तितः ॥¹³

वेदों में अनेकशः जल से अग्नि की उत्पत्ति प्रतिपादित है आयुर्वेद के अपानसूक्त में "आपः "अर्थात् जल द्वारा अपानपात् अर्थात् अग्नि को चारों ओर से घेरने का वर्णन आया है ।¹⁴ अग्नि सबका कल्याण करने वाली है प्राचीन काल में मानव का अग्नि तत्व के प्रति पूजनीय भाव था । आज जितने प्रदूषण हो रहे हैं ,वह अग्नि से ही फैलाए जा रहे हैं परमाणु विस्फोट, वाहनों द्वारा धुएं का उत्सर्जन सब प्रकृति के प्रति छेड़छाड़ है, मानव को इस विकृति से बचना चाहिए। शास्त्रों में अग्नि का नाम सुचिब्रता है। शुद्ध रूप में ही अग्नि का प्रयोग कल्याणकारी है -

अग्नि शुचिब्रततमः शुचिर्विप्रः शुचिः कविः ।

सुची रोचत आहुतः ॥¹⁴

प्राणिमात्र का हित पंचतत्त्वों के संरक्षण में है अगर इनमें विकृति आती है तो ये जीव मात्र के लिए घातक सिद्ध होंगे , इस बात को संस्कृत वाङ्मय में विचारपूर्वक सिद्ध किया गया है। जावाल दर्शनोपनिषद् में यह बात स्पष्टता पूर्वक कही गई है-

यदा सर्वाणि भूतानि स्वात्मन्येव पश्यति ।

सर्वभूतेषु चात्मानं ब्रह्म सम्पद्यते तदा ॥¹⁵

उपनिषद् साहित्य में वनस्पतियों को जीवनदायनी कहा गया है केनोपनिषद् के अनुसार ये ब्रह्म हैं इनकी उपासना की जानी चाहिए-

तद्धतदवनं नाम तद्वनमित्युपासिष्यम् (केन.4/6) उपनिषदों में प्रकृति के अनुकूल रहने की बात कही गई है, हम प्रकृति पर निर्भर रहें , प्रकृति को किसी प्रकार का हमारे द्वारा कष्ट न हो, पर्वतों की उत्पात्यकाएं , नदियों के तट प्रदेश, वृक्षादियुक्त वनप्रदेश शांत होते हैं अध्ययन- अध्यापन के लिए ये स्थान फलदाई हैं-

पर्वताग्रे नदीतीरे विल्वमूले वनेथवा ।

मनोरमे शुचौ देशे मठं कृत्वा समाहितः ॥¹⁶

भारतीय साहित्य परम्परा में जीव मात्र के कल्याण की कामना की गई है -

सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः।

सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मां कश्चिद् दुःख भाग्भवेत्॥

हम वैदिक काल से ही परस्पर स्नेहपूर्वक जीवन जीने की प्रेरणा प्राप्त करते आये हैं -

सं गच्छध्वं सं वदध्वं सं वो मनांसि जानताम् ।

¹³ चरक संहिता 28/3

¹⁴ ऋक्.2/35/31

¹⁵ जाबलोप.14

¹⁶ जावालो.5/4

देवाभागं जथा पूर्वं सज्जानानां उपासते ॥¹⁷

ॐ सहनाववतु सह नौ भुनक्तु सहवीर्यं करवावहै।

तेजस्विनावधीतमस्तु मा विद्विषावहै ॥¹⁸

भारतीय ज्ञान परंपरा में प्रकृति को देव स्वरूप माना गया है, उसका वंदन पूजन करने का विधान है अर्थात् प्रकृति हमारे द्वारा सभी प्रकार से सुरक्षित रहे। भविष्य पुराण में भगवान सूर्य को परम गति व परमपुरुष बताया गया है-

नास्ति आदित्य समो देव नास्त्यादित्यसमा गतिः।

रुद्रेन्द्रोपेन्द्रकेन्द्राणां विप्रेन्द्रं त्रिदिवौकसाम् ।

द्युतिर्युतिमतां कृत्स्नांतेजो यत्सार्वलौकिकम् ॥¹⁹

सभी भारतीय ग्रंथों में प्रकृति के संरक्षण और पोषण की ही चर्चा है, प्रकृति को किसी भी प्रकार से हानि नहीं पहुंचानी चाहिए, इसी बात का समर्थन पंचतंत्र में इस प्रकार से किया गया है -

वृक्षान् छित्वा पशून् हत्वा कृत्वा रुधिरकर्दमम्।

यद्येवं गम्यते स्वर्गं नरकं केन गम्यते ॥²⁰

अर्थात् वृक्षों को काटकर पशुओं को मारकर यदि कोई स्वर्ग की प्राप्ति करना चाहता है तो नरक भला किसे प्राप्त होगा।

इसी प्रकार विष्णु पुराण में भी इस बात का समर्थन किया गया है-

छिनत्ति वीरुधो यस्तु वीरुत्संस्थे निशाकरे ।

पत्रं वा पातयत्येकं ब्रह्महत्यां च विन्दति ॥²¹

संस्कृत साहित्य के दो महाकाव्य रामायण और महाभारत हैं जिनका भारत में ही नहीं विश्व में भी अध्ययन किया जाता है ये दोनों महाकाव्य प्रकृति के पोषक हैं रामायण का प्रारंभ महर्षि वाल्मीकि के प्रकृति प्रेम से ही प्रारंभ होता है जब वे नदी तट पर क्रौंच पक्षी

के जोड़े में से एक की दुःखद मृत्यु को देखते हैं तो उनका प्रकृति प्रेम प्रकट हो जाता है। यह महाकाव्य प्रकृति से ही जुड़ा है इसके महानायक राम का जीवन प्रकृति के संरक्षण एवं पोषण में ही व्यतीत हुआ, उनके द्वारा ऋषियों के यज्ञों का संवर्धन एवं मानवता की स्थापना ही उनका ध्येय है, रामचंद्र जी ने जब वन में प्रवेश किया तो वहां पर उन्होंने शुद्ध वातावरण युक्त ऋषि आश्रमों के दर्शन किये

प्रविश्य तु महारण्यं दण्डकारण्यमात्मवान् ।

ददर्शरामो दुर्धर्षस्तापसाश्रममण्डलम् ॥

¹⁷ ऋग्वेद 10/181/02

¹⁸ तैत्तिरीयोपनिषद्, शांति मंत्र

¹⁹ भविष्य पुराण 01/161/1,3

²⁰ पंचतन्त्र(काकोलोकीय)03/105

²¹ विष्णुपुराण 02/12/10

शरण्यं सर्वभूतानां सुसंमृष्टाजिरं सदा ।
 मृगैर्बहुभिराकीर्णं पक्षिसंघैःसमावृतम् ॥
 आरण्यैश्च महावृक्षैःपुण्यैःस्वादुफलैर्युतम् ।
 पुष्पैर्वन्यैःपरिक्षिप्तं पद्मिन्या च सपद्मयः ॥²²

इसी प्रकार महाभारत की संपूर्ण कथा प्रकृति संरक्षण एवं पोषण में ही दृष्टिगत होती है इसके मुख्य पात्र भगवान श्री कृष्ण का संपूर्ण जीवन ही प्रकृति प्रेम से ही जुड़ा है। गोचारण, गोवर्धन पूजन प्रकृति को संरक्षित करना ही उनका विशेष कार्य है। महाभारत के अनुसार संपूर्ण जगत पांच महाभूतों से निर्मित है -

तत्र- तत्र हि दृश्यन्ते धातवःपान्चभौतिकाः ।
 यैरावृतमिदं सर्वं जगत् स्थावरजंगमम् ॥²³

वृक्षों वनस्पतियों से हमें बहुत प्रकार के फल औषधियां प्राप्त होती हैं किंतु उनका संग्रह आवश्यकता अनुसार एवं उनको संरक्षित करते हुए किया जाना चाहिए-

यथा मधुसमादत्ते रक्षनपुष्पाणि षट्पदम् ।
 तदवदर्थान् मनुष्येभ्य आदद्यादविहिंसया ॥
 पुष्पं पुष्पं विचिन्वीत मूलोच्छेदं न कारयेत् ।
 मालाकार इवारामे न यथाङ्गारकारकः ॥²⁴

इसी प्रकार पौराणिक साहित्य में वायुमंडल की सुचिता जल संरक्षण, स्थल मंडल के संरक्षण पर विशेष बल दिया गया है

पृथ्वी सगन्धा सरसस्तथापःस्पर्शश्च वायुर्ज्वलनं सतेजा ।
 नभः सशब्दं महता सहैव यच्छन्तु सर्वे मम सुप्रभातम् ॥²⁵

धर्म शास्त्रीय ग्रन्थों में भी पांच महाभूतों को सकल ब्रह्मांड का आधार बताया गया है, मनु एवं ऋषि पराशर का विचार है कि प्राकृतिक तत्त्व शुद्ध अवस्था में हैं तो वह देहधारियों के लिए कल्याण कारक होते हैं जैसे-

ज्ञानं तपोग्निराहारोमृन्मनोर्वायुपांजनम् ।
 वायुःकर्माकालौ च शुद्धेःकर्तृणि देहिनाम् ॥

अर्थात् ज्ञान ,तप, अग्नि ,आहार ,मृदा ,मन ,जल,अनुलेपन ,वायु, कर्म ,सूर्य और समय ये सभी देहधारियों की शुद्धि करने वाले हैं अतः प्राकृतिक स्वरूप को स्थिर रखने में जीव मात्र का कल्याण निहित है।

निष्कर्ष - भारतीय ज्ञान परंपरा में प्रकृति को चैतन्यता पूर्ण मनाते हुए उसका संरक्षण,संवर्धन अत्यंत आवश्यक बताया गया है क्योंकि जीव के आधारभूत घटक प्रकृति से ही तादात्म्य रखते हैं। पंचमहाभूतों में

²² बालरामायण 03/1/1,03/7

²³ महाभारत वन.211/11

²⁴ महा. उद्योग प. 34/17-18

²⁵ वामन पुराण 14/26

विकृति होने से जीव भी विकृति को प्राप्त करता है इसीलिए वेद में सभी प्रकार से सर्वत्र स्वच्छता ,निर्मलता एवं मंगल की कामना की गई है-

ओम् द्यौः शान्तिरन्तरिक्षं शान्तिः पृथिवी शान्तिरापः शान्तिरोषधयः शान्तिः । वनस्पतयः

शान्तिर्विश्वेदेवाः शान्तिर्ब्रह्मशान्तिः सर्वं शान्तिः शान्तिरेव शान्तिः सा मा शान्तिरेधि ।²⁶

उपनिषदों में इसी प्रकार प्रकृति की सर्व प्रकार से संरक्षण की कामना की गई है जो जीव मात्र के लिए सभी प्रकार से कल्याणकारी हो

ओम् भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवाः , भद्रं पश्येमाक्षिभिर्यजत्रा ।

स्थिरैरङ्गैस्तुष्टुवांसस्तनुभिः ।

भृद्यमहिदेव हितं यदायुः।

अतः सार रूप में यह कहा जा सकता है कि भारतीय ज्ञान प्रणाली का अनुपालन करने पर ही जीव जगत् का भविष्य सुरक्षित एवं संरक्षित रह सकेगा । भारतीय ज्ञान परंपरा की पुनर्स्थापना में ही विश्व का कल्याण निहित है - मधुवाता ऋतायते मधु क्षरन्ति सिन्धवः । माध्वीर्नः सन्तोषधीः ।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची -

01. अभिज्ञान शाकुन्तलम्, डा. शिव बालक द्विवेदी, हंसा प्रकाशन जयपुर-302001
- 02 श्रीमद् भागवत गीता-गीता प्रेस गोरखपुर -273005
- 03 श्वेतास्वरोपनिषद्-गीता प्रेस गोरखपुर -273005
- 04 ईशावास्योपनिषद्-गीता प्रेस गोरखपुर-273005
- 05 जावालदर्थनोपनिषद्-गीता प्रेस गोरखपुर-273005
- 06 तैत्तिरीयोपनिषद्-गीता प्रेस गोरखपुर-273005
- 07 श्रीमद् भागवत महापुराण, गीताप्रेस गोरखपुर-273005
- 08 विष्णु पुराण-गीता प्रेस गोरखपुर-273005
- 09 महाभारत-गीता प्रेस गोरखपुर-273005
- 10 चरक संहिता, द्वितीय भाग -चौखंबा संस्कृत प्रतिष्ठान दिल्ली 1110007
11. भविष्य पुराण-गीता प्रेस गोरखपुर 273005
12. पंचतंत्र -अनुवादक-भीमराज शर्मा शास्त्री, हंसा प्रकाशन जयपुर 302001 संस्करण-2026
14. ऋग्वेद ,विद्यानिधि प्रकाशन दिल्ली 110094
- 15 अथर्ववेद, विद्यानिधि प्रकाशन दिल्ली 110094

²⁶ यजुर्वेद 36/17